हमारी पूरी कोशिश है कि आपको हिंदी की अधिकतम पुस्तकें मुफ्त उपलब्ध करायी जायें और इन्टरनेट पर हिंदी की उपस्थिति को अधिक से अधिक बढ़ाया जाए | इसी क्रम में मैं आपके सामने एक से एक अधिक पुस्तकें प्रस्तुत कर रहा हूँ |

परन्तु जैसा कि आप जानते हैं इंटरनेट पर किताबें अपलोड करने , उन्हें हमेशा उपलब्ध रखने , तथा साईट अच्छी तरह और सरल रूप से काम करे इसके लिए अत्यंत मेहनत के साथ साथ संसाधनों की भी आवश्यकता होती है , और यही वह कारण है जिसकी वजह से अभी तक हिंदी भाषा की कोई भी वेबसाइट एक दो साल से ज्यादा नहीं चली है और बहुत ही अल्प समय में एक से एक अच्छी वेबसाइट बंद हो चुकी हैं |

यह चुनौती हमारे सामने भी है , लेकिन एक विश्वास भी कि हिंदी के जागरूक हो रहे पाठकों को इस समस्या के बारे में अंदाज़ा है और वे इस बारे में केवल मूकदर्शक नहीं है | हम आपको हिंदी की पुस्तकें देंगे , हिंदी में जानकारी देंगे और बहुत कुछ देंगे और हमें आशा है कि आप भी हमे बदले में अपना प्यार देंगे और हमारी मदद करेंगे हिन्दी को सम्म्रद्ध बनाने में |

अपना हाथ बढाइये और हमारी मदद कीजिये | मदद करने के लिए जरूरी नहीं है कि आप पैसे या आर्थिक मदद ही करें , आप जिस तरह चाहें उस तरह हमारी मदद कर सकते हैं | हमारी मदद करने के तरीकों को आप यहाँ देख सकते हैं |

आशा है आप हमारी सहायता करेंगे |

अगर आपको हमारा प्रयत्न पसंद आया हो तो सिर्फ 500 रू. का सहयोग करे| आपका सहयोग हिंदी साहित्य को अधिक से अधिक विस्तृत रूप देने में उपयोगी होगा | आप Paypal अथवा बैंक ट्रान्सफर से सहयोग कर सकते हैं | अधिक जानकारी के लिए मेल करें preetam960@gmail.com अथवा यहाँ देखें

धन्यवाद

।। श्रीहरिः ।।

भगवान् आज ही मिल सकते हैं

परमात्मप्राप्ति बहुत सुगम है। इतना सुगम दूसरा कोई काम नहीं है। परंतु केवल परमात्माकी ही चाहना रहे, साथ में दूसरी कोई भी चाहना न रहे। कारण कि परमात्माके समान दूसरा कोई है ही नहीं।* जैसे परमात्मा अनन्य हैं, ऐसे ही उनकी चाहना भी अनन्य होनी चाहिये। सांसारिक भोगोंके प्राप्त होने में तीन बातें होनी जरूरी हैं— इच्छा, उद्योग और प्रारब्ध। पहले तो सांसारिक

* न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ।।
(गीता ११।४३)

'हे अनन्त प्रभावशाली भगवन्! इस त्रिलोकी में आपके समान भी दूसरा कोई नहीं है, फिर आपसे अधिक तो हो ही कैसे सकता है!'

वस्तुको प्राप्त करनेकी इच्छा होनी चाहिये, फिर उसकी प्राप्तिके लिये कर्म करना चाहिये। कर्म करनेपर भी उसकी प्राप्ति तब होगी, जब उसके मिलनेका प्रारब्ध होगा। अगर प्रारब्ध नहीं होगा तो इच्छा रखते हुए और उद्योग करते हुए भी वस्तु नहीं मिलेगी। इसलिये उद्योग तो करते हैं नफेके लिये, पर लग जाता है घाटा! परंतु परमात्माकी प्राप्ति इच्छामात्रसे होती है। उसमें उद्योग और प्रारब्धकी जरूरत नहीं है। परमात्माके मार्गमें घाटा कभी होता ही नहीं, नफा-ही-नफा होता है।

एक परमात्माके सिवाय कोई भी चीज इच्छामात्रसे नहीं मिलती। कारण यह है कि मनुष्यशरीर परमात्माकी प्राप्तिके लिये ही मिला है। अपनी प्राप्तिका उद्देश्य रखकर ही भगवान्‌ने हमारेको मनुष्यशरीर दिया है। दूसरी बात, परमात्मा सब जगह हैं। सुईकी तीखी नोक टिक जाय,

इतनी जगह भी भगवान्‌से खाली नहीं है। अतः उनकी प्राप्तिमें उद्योग और प्रारब्धका काम ही नहीं है। कर्मोंसे वह चीज मिलती है, जो नाशवान् होती है। अविनाशी परमात्मा कर्मोंसे नहीं मिलते। उनकी प्राप्ति उत्कट इच्छामात्रसे होती है।

पुरुष हो या स्त्री हो, साधु हो या गृहस्थ हो, पढ़ा-लिखा हो या अपढ़ हो, बालक हो या जवान हो, कैसा ही क्यों न हो, वह इच्छामात्रसे परमात्माको प्राप्त कर सकता है। परमात्माके सिवाय न जीनेकी चाहना हो, न मरनेकी चाहना हो, न भोगोंकी चाहना हो, न संग्रहकी चाहना हो। वस्तुओंकी चाहना न होने से वस्तुओंका अभाव नहीं हो जायगा। जो हमारे प्रारब्धमें लिखा है, वह हमारेको मिलेगा ही। जो चीज हमारे भाग्यमें लिखी है, उसको दूसरा नहीं ले सकता– 'यदस्मदीयं न हि तत्परेषाम्'। हमारेको आनेवाला बुखार दूसरेको कैसे आयेगा? ऐसे ही

हमारे प्रारब्धमें धन लिखा है तो जरूर आयेगा। परंतु परमात्माकी प्राप्ति में प्रारब्ध नहीं है।

परमात्मा किसी मूल्यके बदले नहीं मिलते। मूल्यसे वही वस्तु मिलती है, जो मूल्यसे छोटी होती है। बाजारमें किसी वस्तुके जितने रुपये लगते हैं, वह वस्तु उतने रुपयोंकी नहीं होती। हमारे पास ऐसी कोई वस्तु (क्रिया और पदार्थ) है ही नहीं, जिससे परमात्माको प्राप्त किया जा सके। वह परमात्मा अद्वितीय है, सदैव है, समर्थ है, सब समयमें है और सब जगह है। वह हमारा है और हमारेमें है—'सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टः' (गीता १५।१५) 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' (गीता १८।६१)। वह हमारेसे दूर नहीं है। हम चौरासी लाख योनियोंमें चले जायँ तो भी भगवान् हमारे हृदयमें रहेंगे। स्वर्ग या नरकमें चले जायँ तो भी वे हमारे हृदयमें रहेंगे। पशु-पक्षी या वृक्ष आदि बन जायँ

तो भी वे हमारे हृदयमें रहेंगे। देवता बन जायँ तो भी वे हमारे हृदयमें रहेंगे। तत्त्वज्ञ, जीवन्मुक्त बन जायँ तो भी वे हमारे हृदयमें रहेंगे। दुष्ट-से-दुष्ट, पापी-से-पापी, अन्यायी-से-अन्यायी बन जायँ तो भी वे भगवान् हमारे हृदयमें रहेंगे। ऐसे सबके हृदयमें रहनेवाले भगवान्‌की प्राप्ति क्या कठिन होगी? पर जीनेकी इच्छा, मानकी इच्छा, बड़ाईकी इच्छा, सुखकी इच्छा, भोगकी इच्छा आदि दूसरी इच्छाएँ साथमें रहते हुए भगवान् नहीं मिलते। कारण कि भगवान्‌के समान तो भगवान् ही हैं। उनके समान दूसरा कोई था ही नहीं, है ही नहीं, होगा ही नहीं, हो सकता ही नहीं, फिर वे कैसे मिलेंगे? केवल भगवान्‌की चाहना होनेसे ही वे मिलेंगे। अविनाशी भगवान्‌के सामने नाशवान्‌की क्या कीमत है? क्या नाशवान् क्रिया और पदार्थके द्वारा वे मिल सकते हैं? नहीं मिल सकते। जब साधक भगवान्‌से मिले बिना

नहीं रह सकते, तब भगवान् भी उससे मिले बिना नहीं रहते: क्योंकि भगवान्का स्वभाव है— 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्' (गीता ४।११) 'जो भक्त जिस प्रकार मेरी शरण लेते हैं, मैं उन्हें उसी प्रकार आश्रय देता हूँ।'

मान लें कि कोई मच्छर गरुडजीसे मिलना चाहे और गरुडजी भी उससे मिलना चाहें तो पहले मच्छर गरुडजीके पास पहुँचेगा या गरुडजी मच्छरके पास पहुँचेंगे? गरुडजी से मिलनेमें मच्छरकी ताकत काम नहीं करेगी। इसमें तो गरुडजीकी ताकत ही काम करेगी। इसी तरह परमात्मप्राप्तिकी इच्छा हो तो परमात्माकी ताकत ही काम करेगी। इसमें हमारी ताकत, हमारे कर्म, हमारा प्रारब्ध काम नहीं करेगा, प्रत्युत हमारी चाहना ही काम करेगी। हमारी चाहनाके बिना और किसी चीजकी आवश्यकता नहीं है।

हम तो भगवान्के पास नहीं पहुँच सकते तो क्या भगवान् भी हमारे पास नहीं पहुँच सकते? हम कितना ही जोर लगायें, पर भगवान् के पास नहीं पहुँच सकते। परंतु भगवान् तो हमारे हृदयमें ही विराजमान हैं! हम भगवान्को दूर मानते हैं, इसलिये भगवान् हमसे दूर होते हैं। द्रौपदीने भगवान्को *'गोविन्द द्वारकावासिन्'* कहकर पुकारा तो भगवान्को द्वारका जाकर आना पड़ा। वह यहाँ कहती तो वे चट यहीं प्रकट हो जाते! अगर हम ऐसा मानते हैं कि भगवान् अभी नहीं मिलेंगे तो वे नहीं मिलेंगे; क्योंकि हमने आड़ लगा दी।

गोरखपुरकी एक घटना है। संवत् २००० से पहलेकी बात है। मैं गोरखपुरमें व्याख्यान देता था। वहाँ सेवारामजी नामके एक सज्जन थे, जो बैंकमें काम करते थे। एक दिन मैंने व्याख्यानमें कह दिया कि अगर आपका दृढ

विचार हो जाय कि भगवान् आज मिलेंगे तो वे आज ही मिल जायँगे ! उन सज्जनको यह बात लग गयी। उन्होंने विचार कर लिया कि हमें तो आज ही भगवान्‌से मिलना है। वे पुष्पमाला, चन्दन आदि ले आये कि भगवान् आयेंगे तो उनको माला पहनाऊँगा, चन्दन चढ़ाऊँगा! वे कमरा बंद करके भगवान्‌के आनेकी प्रतीक्षामें बैठ गये। समय पर भगवान् के आने की सम्भावना भी हो गयी और सुगन्ध भी आने लगी, पर भगवान् प्रकट नहीं हुए। दूसरे दिन उन्होंने मेरेसे कहा कि आज आप मेरे घरसे भिक्षा लें। मैं कई घरोंसे भिक्षा लेकर पाता था। उस दिन उनके घर गया तो उन्होंने मेरेसे पूछा कि भगवान् मिलनेवाले थे,सुगन्ध भी आ गयी थी, फिर बाधा क्या लगी कि वे मिले नहीं? मैंने कहा कि भाई! मेरे को इसका क्या पता? परंतु मैं तुम्हारेसे पूछता हूँ कि क्या तुम्हारे मनमें यह बात आती

थी कि इतनी जल्दी भगवान् कैसे मिलेंगे? वे बोले कि यह बात तो आती थी! मैंने कहा कि इसी बातने अटकाया! अगर मन में यह बात होती कि भगवान् मेरेको अवश्य मिलेंगे, उनको मिलना ही पड़ेगा तो वे जरूर मिलते। भगवान् ऐसे कैसे जल्दी मिलेंगे–ऐसा भाव करके तुमने ही बाधा लगायी है।

अगर आप विचार कर लें कि भगवान् आज मिलेंगे तो वे आज ही मिल जायँगे! परंतु मनमें यह छाया नहीं आनी चाहिये कि इतनी जल्दी कैसे मिलेंगे? भगवान् आपके कर्मोंसे अटकते नहीं। अगर आपके दुष्कर्मसे, पापकर्मसे भगवान् अटक जायँ तो वे मिलकर भी क्या निहाल करेंगे? परंतु भगवान् किसी कर्मसे अटकते नहीं। ऐसी कोई शक्ति है ही नहीं, जो भगवान्‌को मिलनेसे रोक दे। वे न तो पापकर्मोंसे अटकते हैं, न पुण्यकर्मोंसे अटकते हैं। वे सबके लिये

सुलभ हैं। अगर भगवान् हमारे पापोंसे अटक जायँ तो हमारे पाप भगवान्‌से भी प्रबल हुए! अगर पाप प्रबल (बलवान्) हैं तो भगवान् मिलकर भी क्या निहाल करेंगे? जो पापोंसे ही अटक जाय, उसके मिलनेसे क्या लाभ? परंतु भगवान् इतने निर्बल नहीं हैं, जो पापोंसे अटक जायँ। उनके समान बलवान् कोई है नहीं, हुआ नहीं, होगा नहीं, हो सकता ही नहीं। आपकी जोरदार इच्छा हो जाय तो आप कैसे ही हों, भगवान् तो मिलेंगे, मिलेंगे, मिलेंगे! उनको मिलना पड़ेगा, इसमें संदेह नहीं है। परमात्माकी प्राप्तिके लिये ही तो मानवजन्म मिला है, नहीं तो पशुमें और मनुष्यमें क्या फर्क हुआ?

खादते मोदते नित्यं शुनकः शूकरः खरः।
तेषामेषां को विशेषो वृत्तिर्येषां तु तादृशी।।

सूकर कूकर ऊँट खर, बड़ पशुअन में चार।
तुलसी हरि की भगति बिनु, ऐसे ही नर नार।।

देवता भोगयोनि है। वे भी चाहते हैं कि भगवान् हमारेको मिलें—'देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः' (गीता ११।५२)। वे भगवान्‌को चाहते तो हैं, पर भोगोंकी इच्छाको नहीं छोड़ते। यही दशा मनुष्योंकी है। अगर आप हृदयसे भगवान्‌को चाहो तो उनको मिलना ही पड़ेगा, इसमें संदेह नहीं है। पर आप ही बाधा लगा दो कि भगवान् नहीं मिलेंगे, तो फिर वे नहीं मिलेंगे ! गीता में साफ लिखा है-

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः।।
क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।।
(गीता ९। ३०-३१)

'अगर कोई दुराचारी-से-दुराचारी भी अनन्यभक्त होकर मेरा भजन करता है तो उसको साधु ही मानना चाहिये। कारण कि उसने निश्चय बहुत अच्छी तरह कर लिया है।'

'वह तत्काल (उसी क्षण) धर्मात्मा हो जाता है और निरन्तर रहनेवाली शान्तिको प्राप्त हो जाता है। हे कुन्तीनन्दन ! मेरे भक्तका पतन नहीं होता–ऐसी तुम प्रतिज्ञा करो।'

तात्पर्य है कि दुराचारी- से- दुराचारी मनुष्य भी यदि 'अनन्यभाक्' हो जाय अर्थात् भगवान्के सिवाय कोई चाहना न रखे तो उसको भी साधु मान लेना चाहिये; क्योंकि उसने निश्चय पक्का कर लिया है कि भगवान् जरूर मिलेंगे।

आप केवल भगवान्की ही इच्छा करो और कोई इच्छा मत करो। न जीनेकी इच्छा करो, न मरनेकी इच्छा करो। न मानकी इच्छा करो, न बड़ाईकी इच्छा करो। न भोगोंकी इच्छा करो, न

रुपयोंकी इच्छा करो। केवल एक भगवान्की इच्छा करो तो वे मिल जायँगे। क्रम-से-कम मेरी बातकी परीक्षा तो करके देखो! भगवान् आपको मिलते नहीं; क्योंकि आप उनको चाहते नहीं। आपके भीतर रुपयोंकी चाहना हो तो भगवान् बीचमें कूदकर क्यों पड़ेंगे? संसार में सबसे रद्दी वस्तु रुपया है। रुपयोंसे रद्दी चीज दूसरी कोई है ही नहीं। ऐसी रद्दी चीजमें आपका मन अटका हुआ हो तो भगवान् कैसे मिलेंगे? रुपये देकर आप भोजन, वस्त्र, सवारी आदि खरीद सकते हो, पर रुपया खुद न तो खानेके काम आता है, न पहननेके काम आता है, न सवारीके काम आता है। तात्पर्य है कि रुपये काम नहीं आते, प्रत्युत उनका खर्च काम आता है।

परमात्मा इच्छामात्रसे मिलते हैं। उनको रोकनेकी ताकत किसी में भी नहीं है। छोटा बालक रोता है तो माँ आ ही जाती है। बालक

घर का कुछ भी काम नहीं करता, उल्टे काम करनेमें आपको बाधा लगाता है, पर जब वह रोने लगता है, तब सब घरवाले उसके पक्षमें हो जाते हैं। सास-ससुर, देवर-जेठ सभी कहते हैं कि बहू! बालक रो रहा है, उसको उठा ले। माँको सब काम छोड़कर बालकको उठाना पड़ता है। बालकका एकमात्र बल रोना ही है- 'बालानां रोदनं बलम्'। रोनेमें बड़ी ताकत है। आप सच्चे हृदयसे व्याकुल होकर भगवान्के लिये रोने लग जाओ तो जितने भगवान्के भक्त हुए हैं, सन्त-महात्मा हुए हैं, वे सब-के-सब आपके पक्षमें हो जायँगे और भगवान्को उलाहना देंगे कि आप मिलते क्यों नहीं? वे ही भगवान्के सास-ससुर आदि हैं!

वास्तवमें भगवान् मिले हुए ही हैं। आपकी सांसारिक इच्छा ही उनको रोक रही है। आप रुपयोंकी इच्छा करते हो, भोगोंकी इच्छा करते

हो तो भगवान् उनको जबर्दस्ती नहीं छुड़ाते। अगर आप सांसारिक इच्छाएँ छोड़कर केवल भगवान्को ही चाहो तो आपको कौन रोक सकता है? आपको बाधा देनेकी किसीकी ताकत नहीं है। अगर आप भगवान्के लिये व्याकुल हो जाओ तो भगवान् भी व्याकुल हो जायँगे। आप संसारके लिये व्याकुल हो जाओ तो संसार व्याकुल नहीं होगा। आप संसारके लिये रोओ तो संसार राजी नहीं होगा। पर भगवान्के लिये रोओ तो वे भी रो पड़ेंगे।

बालक सच्चा रोता है या झूठा, यह माँ ही समझती है। बालकके आँसू तो आये नहीं, केवल ऊँ-ऊँ करता है तो माँ समझ लेती है कि यह ठगाई करता है! अगर बालक सच्चाईसे रो पड़े, उसके साँस ऊँचे चढ़ जायँ तो माँ सब काम भूल जायगी और चट उसको उठा लेगी। अगर माँ उस बालकके पास न जाय तो उस माँको

मर जाना चाहिये। उसके जीनेका क्या लाभ? ऐसे ही सच्चे हृदयसे चाहनेवालेको भगवान् न मिलें तो भगवान्‌को मर जाना चाहिये!

एक साधु थे। उनके पास एक आदमी आया और उसने पूछा कि भगवान् जल्दी कैसे मिलें? साधु ने कहा कि भगवान् उत्कट चाहना होनेसे मिलेंगे। उसने पूछा कि उत्कट चाहना कैसी होती है? साधुने कहा कि भगवान्‌के बिना रहा न जाय। वह आदमी ठीक समझा नहीं और बार-बार पूछता रहा कि उत्कट चाहना कैसी होती है? एक दिन साधुने उस आदमीसे कहा कि आज तुम मेरे साथ नदीमें स्नान करने चलो। दोनों नदीमें गये और स्नान करने लगे। उस आदमीने जैसे ही नदीमें डुबकी लगायी, साधुने उसका गला पकड़कर नीचे दबा दिया। वह आदमी थोड़ी देर नदीके भीतर छटपटाया, फिर साधुने उसको छोड़ दिया। पानीसे ऊपर आनेपर

वह बोला कि तुम साधु होकर ऐसा काम करते हो! मैं तो आज मर जाता! साधुने पूछा कि बता, तेरेको क्या याद आया ? माँ याद आयी, बाप याद आया, धन याद आया या स्त्री-पुत्र याद आये? वह बोला कि महाराज, मेरे तो प्राण निकले जा रहे थे, याद किसकी आती? साधु बोले कि तुम पूछते थे कि उत्कट अभिलाषा कैसी होती है, उसीका नमूना मैंने तेरेको बताया है। जब एक भगवान्‌के सिवाय कोई भी याद नहीं आयेगा और उनकी प्राप्तिके बिना रह नहीं सकोगे, तब भगवान् मिल जायँगे। भगवान्‌की ताकत नहीं है कि मिले बिना रह जायँ।

भगवान् कर्मोंसे नहीं मिलते। कर्मोंसे मिलने वाली चीज नाशवान् होती है। कर्मोंसे धन, मान, आदर, सत्कार मिलता है। परमात्मा अविनाशी हैं। वे कर्मोंका फल नहीं हैं, प्रत्युत आपकी चाहनाका फल हैं। परंतु आपको परमात्माके

मिलनेकी परवाह ही नहीं है, फिर वे कैसे मिलेंगे? भगवान् मानो कहते हैं कि मेरे बिना तेरा काम चलता है तो मेरा भी तेरे बिना काम चलता है। मेरे बिना तेरा काम अटकता है तो मेरा काम भी तेरे बिना अटकता है। तू मेरे बिना नहीं रह सकता तो मैं भी तेरे बिना नहीं रह सकता।

आपमें परमात्मप्राप्तिकी जोरदार इच्छा है ही नहीं। आप सत्संग करते हो तो लाभ जरूर होगा। जितना सत्संग करोगे, विचार करोगे, उतना लाभ होगा– इसमें संदेह नहीं है। परंतु परमात्माकी प्राप्ति जल्दी नहीं होगी। कई जन्म लग जायँगे, तब उनकी प्राप्ति होगी। अगर उनकी प्राप्तिकी जोरदार इच्छा हो जाय तो भगवान्‌को आना ही पड़ेगा। वे तो हरदम मिलनेके लिये तैयार हैं! जो उनको चाहता है, उसको वे नहीं मिलेंगे तो फिर किसको मिलेंगे? इसलिये

'हे नाथ !' हे मेरे नाथ ! कहते हुए सच्चे हृदयसे उनको पुकारो।

सच्चे हृदयसे प्रार्थना, जब भक्त सच्चा गाय है।
तो भक्तवत्सल कानमें, वह पहुँच झट ही जाय है।।

भक्त सच्चे हृदयसे प्रार्थना करता है तो भगवान्‌को आना ही पड़ता है। किसीकी ताकत नहीं जो भगवान्‌को रोक दे। जिसके भीतर एक भगवान्‌के सिवाय अन्य कोई इच्छा नहीं है, न जीनेकी इच्छा है, न मरनेकी इच्छा है, न मानकी इच्छा है, न सत्कारकी इच्छा है, न आदरकी इच्छा है, न रुपयोंकी इच्छा है, न कुटुम्बकी इच्छा है, उसको भगवान् नहीं मिलेंगे तो क्या मिलेगा? आप पापी हैं या पुण्यात्मा हैं, पढ़े-लिखे हैं या अपढ़ हैं, इस बातको भगवान् नहीं देखते। वे तो केवल आपके हृदयका भाव देखते हैं-

रहति न प्रभु चित चूक किए की।
करत सुरति सय बार हिए की।।

(मानस, बाल० २९।३)

वे हृदयकी बातको याद रखते हैं, पहले किये पापोंको याद रखते ही नहीं! भगवान्‌का अन्तःकरण ऐसा है, जिसमें आपके पाप छपते ही नहीं! केवल आपकी अनन्य लालसा छपती है। भगवान् कैसे मिलें? कैसे मिलें? ऐसी अनन्य लालसा हो जायगी तो भगवान् जरूर मिलेंगे, इसमें संदेह नहीं है। आप और कोई इच्छा न करके, केवल भगवान्‌की इच्छा करके देखो कि वे मिलते हैं कि नहीं मिलते हैं! आप करके देखो तो मेरी भी परीक्षा हो जायगी कि मैं ठीक कहता हूँ कि नहीं! मैं तो गीताके बल पर कहता हूँ। गीतामें भगवान्‌ने कहा है- 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्' (४।११) 'जो भक्त जिस

प्रकार मेरी शरण लेते हैं, मैं उन्हें उसी प्रकार आश्रय देता हूँ।' हमें भगवान्‌के बिना चैन नहीं पड़ेगा तो भगवान्‌को भी हमारे बिना चैन नहीं पड़ेगा। हम भगवान्‌के बिना रोते हैं तो भगवान् भी हमारे बिना रोने लग जायँगे! भगवान्‌के समान सुलभ कोई है ही नहीं! भगवान् कहते हैं-

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।।

(गीता ८।१४)

'हे पृथानन्दन! अनन्य चित्तवाला जो मनुष्य मेरा नित्य-निरन्तर स्मरण करता है, उस नित्य-निरन्तर मुझमें लगे हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ अर्थात् उसको सुलभतासे प्राप्त हो जाता हूँ।'

भगवान्‌ने अपनेको तो सुलभ कहा है, पर महात्माको दुर्लभ कहा है-

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।
(गीता ७।१९)

'बहुत जन्मोंके अन्तिम जन्ममें अर्थात् मनुष्यजन्ममें 'सब कुछ परमात्मा ही हैं'– इस प्रकार जो ज्ञानवान् मेरे शरण होता है, वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है।'

हरि दुरलभ नहिं जगत में, हरिजन दुरलभ होय।
हरि हेर्‌याँ सब जग मिलै, हरिजन कहिं एक होय।।

भगवान्‌के भक्त तो सब जगह नहीं मिलते, पर भगवान् सब जगह मिलते हैं। भक्त जहाँ भी निश्चय कर लेता है, भगवान् वहीं प्रकट हो जाते हैं-

आदि अन्त जन अनँत के, सारे कारज सोय।
जेहि जिव उर नह्चौधरै, तेहि ढिग परगट होय।।

प्रह्लादजीके लिये भगवान् खम्भेमेंसे प्रकट हो गये-

प्रेम बदौं प्रहलादहि को, जिन पाहनतें परमेस्वरु काढ़े।।
(कवितावली ७।१२७)

भगवान् सबके परम सुहृद् हैं। वे पापी, दुराचारीको जल्दी मिलते हैं। माँ कमजोर बालकको जल्दी मिलती है। एक माँके दो बेटे हैं। एक बेटा तो समयपर भोजन कर लेता है, फिर कुछ नहीं लेता और दूसरा बेटा दिनभर खाता रहता है। दोनों बेटे भोजनके लिये बैठ जायँ तो माँ पहले उसको रोटी देगी जो समयपर भोजन करता है; क्योंकि वह भूखा उठ जायगा तो शामतक खायेगा नहीं। दूसरे बेटेको माँ कहती है कि तू ठहर जा; क्योंकि वह तो बकरीकी तरह दिन भर चरता रहता है। दोनों एक ही माँ के बेटे हैं, फिर भी माँ पक्षपात करती है। इसी

तरह जो एक भगवान्‌के सिवाय कुछ नहीं चाहता, उसको भगवान् सबसे पहले मिलते हैं; क्योंकि वह भगवान्‌को अधिक प्रिय है। वह एक भगवन्‌के सिवाय अन्य किसीको अपना नहीं मानता। वह भगवान्‌के लिये दुःखी होता है तो भगवान्‌से उसका दुःख सहा नहीं जाता।

कोई चार-पाँच वर्षका बालक हो और उसका माँसे झगड़ा हो जाय तो माँ उसके सामने ढीली पड़ जाती है। संसारकी लड़ाईमें तो जिसमें अधिक बल होता है, वह जीत जाता है, पर प्रेमकी लड़ाईमें जिसमें प्रेम अधिक होता है, वह हार जाता है। बेटा माँसे कहता है कि मैं तेरी गोदीमें नहीं आऊँगा, पर माँ उसकी गरज करती है कि आ जा, आ जा बेटा! माँमें यह स्नेह, भगवान्‌से ही तो आया है। भगवान् भी भक्तकी गरज करते हैं। भगवान्‌को जितनी गरज है,

उतनी गरज दुनियाको नहीं है। माँको जितनी गरज होती है, उतनी बालकको नहीं होती। बालक तो माँका दूध पीते समय दाँतोंसे काट लेता है, पर माँ क्रोध नहीं करती। अगर वह क्रोध करे तो बालक जी सकता है क्या? माँ तो बालकपर कृपा ही करती है। ऐसे ही भगवान हमारी अनन्त जन्मोंकी माता हैं। वे भक्तकी उपेक्षा नहीं कर सकते। भक्तको वे अपना मुकुटमणि मानते हैं— *'मैं तो हूँ भगतनको दास, भगत मेरे मुकुटमणि'।*

भक्तोंका काम करनेके लिये भगवान् हरदम तैयार रहते हैं। जैसे बच्चा माँके बिना नहीं रह सकता और माँ बच्चेके बिना नहीं रह सकती, ऐसे ही भक्त भगवान्‌के बिना नहीं रह सकता और भगवान् भक्तके बिना नहीं रह सकते।

❁ ❁ ❁

।।श्रीहरिः।।

साधकों के प्रति

(श्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

श्री भगवान् कहते हैं :-

योगास्त्रयो मया प्रोक्ता नृणां श्रेयोविधित्सया।
ज्ञानं कर्म च भक्तिश्च नोपायोऽन्योऽस्ति कुत्रचित्।।
(श्रीमद्भा० ११।२०।६)

"अपना कल्याण चाहने वाले मनुष्यों के लिये मैंने तीन योग बताये हैं - ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग। इन तीनों के सिवाय दूसरा कोई कल्याण का मार्ग नहीं है।"

परमात्मप्राप्ति तत्काल होने वाली वस्तु है। इसमें न तो भविष्य की अपेक्षा है और न क्रिया एवं पदार्थ की ही अपेक्षा है। परमात्मप्राप्ति के

तीन मुख्य मार्ग हैं :-

ज्ञानयोग (विवेक-मार्ग)

अपने जाने हुए असत् का त्याग करना विवेक-मार्ग है। इसके तीन उपाय हैं :-

१ अनन्त ब्रह्माण्डों में लेशमात्र भी कोई वस्तु मेरी नहीं है।

२- मेरेको कुछ भी नहीं चाहिये।

३- मेरेको अपने लिये कुछ नहीं करना है। अपने लिये कुछ न करने से अहम् नहीं रहेगा।

कर्मयोग (योग-मार्ग)

बुराई का सर्वथा त्याग करना योग-मार्ग है। इसके तीन उपाय हैं :-

१- किसीको बुरा न समझना, किसीका बुरा न

चाहना और किसी का बुरा न करना।

२- दुःखी व्यक्तियों को देखकर करुणित होना ओर सुखी व्यक्तियों को देखकर प्रसन्न होना।

३- संसारसे मिली हुई वस्तुओं को संसार की ही सेवा में लगा देना और बदले में कुछ न चाहना।

भक्तियोग (विश्वास-मार्ग)

सर्वथा भगवान् के शरणागत हो जाना विश्वास-मार्ग है। इसके दो उपाय हैं :-

१- मैं केवल भगवान् का अंश हूँ - 'ममैवांशो जीवलोके' (गीता१५।७) '*ईश्वर अंस जीव अविनाशी*' (मानस७।११७।१)। भगवान् मेरे पिता हैं, मैं उनका पुत्र हूँ। भगवान् का अंश होने के नाते मैं केवल भगवान् का हूँ और केवल भगवान् ही मेरे

हैं। भगवान् के सिवाय और कोई मेरा नहीं है।

२- (क) सब कुछ उनका है अर्थात् संसार में कुछ भी देखने, सुनने और मनन करने में आता है, वह सब भगवान् का ही है।

(ख) सब कुछ वे ही हैं अर्थात् भगवान् के सिवाय कुछ भी नहीं है। मैं-सहित सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का स्वरूप है - 'वासुदेवः सर्वम्' (गीता ७।१९)।

(ग) उनके सिवाय अन्य कुछ हुआ ही नहीं, कभी होगा नहीं, कभी होना सम्भव ही नहीं। एक मात्र भगवान् ही थे, भगवान् ही हैं और भगवान् ही रहेंगे। इसीके अनुभव में मानव-जीवन की पूर्णता है।

* * *

॥ श्रीहरिः ॥

तीनों योग-मार्गों की तुलनात्मक तालिका

ज्ञानयोग	कर्मयोग	भक्तियोग
१. आध्यात्मिक साधना	भौतिक साधना	आस्तिक साधना
२. जाननेकी शक्ति	करनेकी शक्ति	माननेकी शक्ति
३. विवेककी मुख्यता	क्रियाकी मुख्यता	भाव (श्रद्धा-विश्वास)-की मुख्यता
४. स्वरूपको जानना	सेवा करना	भगवान्‌को मानना
५. स्वरूपपरायणता	कर्तव्यपरायणता	भगवत्-परायणता
६. स्वाश्रय	धर्म (कर्तव्य)-का आश्रय	भगवदाश्रय
७. अहंताका त्याग	कामनाका त्याग	ममताका त्याग
८. अहंताको मिटाना	अहंताको शुद्ध करना	अहंताको बदलना

ज्ञानयोग	कर्मयोग	भक्तियोग
९. अपने लिये उपयोगी	संसारके लिये उपयोगी	भगवान्‌के लिये उपयोगी
१०. 'अक्षर' की प्रधानता	'क्षर' की प्रधानता	'पुरुषोत्तम' की प्रधानता
११. ज्ञातज्ञातव्यता	कृतकृत्यता	प्राप्तप्राप्तव्यता
१२. अखण्डरस	शान्तरस	अनन्तरस
१३. तात्त्विक-सम्बन्ध	नित्य-सम्बन्ध	आत्मीय-सम्बन्ध
१४. परमात्मासे एकता	परमात्मासे समीपता	परमात्मासे अभिन्नता
१५. बोधकी प्राप्ति	योगकी प्राप्ति	प्रेमकी प्राप्ति
१६. स्वाधीनता	उदारता	आत्मीयता
१७. स्वरूपमें स्थिति होती है	जड़का आकर्षण मिटता है	भगवान् में आकर्षण होता है
१८. कर्तृत्वका त्याग	भोक्तृत्वका त्याग	ममत्वका त्याग
१९. आत्मसुखसे सुखी होना	संसारके सुखसे सुखी होना	भगवान्‌के सुखसे सुखी होना

ज्ञानयोग	कर्मयोग	भक्तियोग
२०. कुछ भी न करना	संसारके लिये करना	भगवान्‌के लिये करना
२१. प्रकृतिके अर्पण करना	संसारके अर्पण करना	भगवान्‌के अर्पण करना
२२. विरक्ति	अनासक्ति	अनुरक्ति
२३. देहाभिमान बाधक है	कामना बाधक है	भगवद्विमुखता बाधक है
२४. विचारकी मुख्यता	उद्योगकी मुख्यता	विश्वासकी मुख्यता
२५. कर्म भस्म हो जाते हैं	कर्म अकर्म हो जाते हैं	कर्म दिव्य हो जाते हैं
२६. कुछ भी न चाहना	दूसरोंकी चाह पूरी करना	भगवान्‌की चाहमें अपनी चाह मिलाना
२७. किसीको भी अपना न मानना	सभीको (सेवाके लिये) अपना मानना	एक (भगवान्)-को ही अपना मानना

* * *

।। श्रीहरिः ।।

प्रार्थना

(१)

हे नाथ! अब तो आपको हमारेपर कृपा करनी ही पड़ेगी। हम भले-बुरे कैसे ही हों, आपके ही बालक हैं। आपको छोड़कर हम कहाँ जायँ? किससे बोलें? हमारी कौन सुने? संसार तो सफा जंगल है। उससे कहना अरण्यरोदन (जंगल में रोना) है। आपके सिवाय कोई सुननेवाला नहीं है। महाराज ! हम किससे कहें? हमारेपर किसको दया आती है? अच्छे-अच्छे लक्षण हों तो दूसरा भी कोई सुन ले। हमारे-जैसे दोषी, अवगुणीकी बात कौन सुने? कौन अपने पास रखे? हे गोविन्द-गोपाल! यह तो आप ही हैं, जो गायों और बैलोंको भी अपने पास रखते

हैं, चारा देते हैं। हम तो बस, बैलकी तरह ही हैं! बिलकुल जंगली आदमी हैं! आप ही हमें निभाओगे। और कौन है, किसकी हिम्मत है कि हमें अपना ले? ऐसी शक्ति भी किसमें है? हम किसीको क्या निहाल करेंगे? हमें अपनाकर भी कोई क्या करेगा? हमें रोटी दे, कपड़ा दे, मकान दे, खर्चा करे और हमारेसे क्या मतलब सिद्ध होगा? ऐसे निकम्मे आदमीको कौन सँभाले? कोई गुण-लक्षण हों तो सँभाले। यह तो आप दया करते हैं, तभी काम चलता है, नहीं तो कौन परवाह करता है?

हे प्रभो! थोड़ी-सी योग्यता आते ही हमें अभिमान हो जाता है! योग्यता तो थोड़ी होती है, पर मान लेते हैं कि हम तो बहुत बड़े हो गये, बड़े योग्य बन गये, बड़े भक्त बन गये, बड़े वक्ता बन गये, बड़े चतुर बन गये, बड़े होशियार बन गये, बड़े विद्वान् बन गये, बड़े त्यागी, विरक्त बन

गये! भीतरमें यह अभिमान भरा है नाथ! आपकी ऐसी बात सुनी है कि आप अभिमानसे द्वेष करते हो और दैन्यसे प्रेम करते हो*। अगर आपको अभिमान सुहाता नहीं है तो फिर उसको मिटा दो, दूर कर दो। बालक कीचड़से सना हुआ हो और गोदी में जाना चाहता हो तो माँ ही उसको धोयेगी, और कौन धोयेगा? क्या बालक खुद स्नान करके आयेगा, तब माँ उसको गोदी में लेगी? आपको हमारी अशुद्धि नहीं सुहाती तो फिर कौन साफ करेगा? आपको ही साफ करना पड़ेगा महाराज!

हे नाथ! हमारे सब कुछ आप ही हो। आपके सिवाय और कौन है, जो हमारे-जैसे को गले लगाये? इसलिये हे प्रभो! अपना जानकर हमारेपर

* ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद् दैन्यप्रियत्वाच्च। (नारदभक्तिसूत्र २७)

कृपा करो। एक मारवाड़ी कहावत है- *'गैलो गूँगो बावलो, तो भी चाकर रावलो।'* हम कैसे ही हैं आप के ही हैं आप अपनी दयासे ही हमें सँभालो, हमारे लक्षणों से नहीं। जिन भरतजीकी रामजी से भी ज्यादा महिमा कही गयी है, वे भी कहते हैं–

जौं करनी समुझै प्रभु मोरी।
नहिं निस्तार कलप सत कोरी।।
जन अवगुन प्रभु मान न काऊ।
दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ।।

(मानस, उत्तर० १।३

आपके ऐसे मृदुल स्वभावको सुनकर ही आपके सामने आनेकी हिम्मत होती है। अगर अपनी तरफ देखें तो आपके सामने आनेकी हिम्मत ही नहीं होती। आपने वृत्रासुर, प्रह्लाद, विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, गजेन्द्र, जटायु, तुलाधार वैश्य, धर्मव्याध, कुब्जा, व्रज की गोपियाँ आदि

का भी उद्धार कर दिया, यह देखकर हमारी हिम्मत होती है कि आप हमारा भी उद्धार करेंगे*। जैसे अत्यन्त लोभी आदमी कूड़े-कचरेमें पड़े पैसेको भी उठा लेता है, ऐसे ही आप भी कूड़े-कचरेमें पड़े हम-जैसोंको उठा लेते हो। थोड़ी बातसे ही आप रीझ जाते हो– *'तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरें'* (मानस, बाल० ३४२।२)। कारण कि आपका स्वभाव है–

रहति न प्रभु चित चूक किए की।
करत सुरति सय बार हिए की।।

(मानस, बाल० २९।३)

अगर आपका ऐसा स्वभाव न हो तो हम आपके नजदीक भी न आ सकें; नजदीक आनेकी

* सठ सेवक की प्रीति रुचि रखिहहिं राम कृपालु।
उपल किए जलजान जेहिं सचिव सुमति कपि भालु।।
प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सीलनिधान।।
(मानस, बाल० २८-२९)

हिम्मत भी न हो सके! आप हमारे अवगुणोंकी तरफ देखते ही नहीं। थोड़ा भी गुण हो तो आप उस तरफ देखते हो। वह थोड़ा भी आपकी दृष्टिसे है। हे नाथ! हम विचार करें तो हमारेमें राग-द्वेष, काम-क्रोध, लोभ-मोह, अभिमान आदि कितने ही दोष भरे पड़े हैं! हमारेसे आप ज्यादा जानते हो, पर जानते हुए भी आप उनको मानते नहीं- *'जन अवगुन प्रभु मान न काऊ'*, इसीसे हमारा काम चलता है प्रभो! कहीं आप देखने लग जाओ कि यह कैसा है, तो महाराज! पोल-ही-पोल निकलेगी!

हे नाथ! बिना आपके कौन सुननेवाला है? कोई जाननेवाला भी नहीं है! हनुमान्‌जी विभीषण से कहते हैं कि मैं तो चंचल वानरकुलमें पैदा हुआ हूँ। प्रातः काल जो हमलोगोंका नाम भी ले ले तो उस दिन उसको भोजन न मिले! ऐसा

अधम होनेपर भी भगवान्‌ने मेरे पर कृपा की*, फिर तुम तो पवित्र ब्राह्मणकुलमें पैदा हुए हो! कानोंसे ऐसी महिमा सुनकर ही विभीषण आपकी शरण में आये और बोले-

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।।

(मानस, सुन्दर०४५)

जो आपकी शरण में आ जाता है, उसकी आप रक्षा करते हो, उसको सुख देते हो, यह आपका स्वभाव है-

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं।।

(विनयपत्रिका १६२)

*कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा।।
अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्हीं कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर।।
(मानस, सुन्दर० ७)

यहि दरबार दीन को आदर, रीति सदा चलि आई।

(विनयपत्रिका १६५।५)

हरेक दरबारमें दीनका आदर नहीं होता। जबतक हमारे पास कुछ धन-सम्पत्ति है, कुछ गुण है, कुछ योग्यता है, तभीतक दुनिया हमारा आदर करती है। दुनिया तो हमारे गुणोंका आदर करती है, हमारा खुदका (स्वरूपका) नहीं। परन्तु आप हमारा खुदका आदर करते हो, हमें अपना अंश मानते हो- 'ममैवांशो जीवलोके' (गीता १५।७), *'सब मम प्रिय सब मम उपजाए'* (मानस, उत्तर० ८६।२)। हमें अपना अंश मानते ही नहीं, स्पष्टतया जानते हो और अपना जानकर कृपा करते हो। हमारे अवगुणोंकी तरफ आप देखते ही नहीं। बच्चा कैसा ही हो, कुछ भी करे, पर 'अपना है'– यह जानकर माँ कृपा करती है, नहीं तो मुफ्तमें कौन आफत मोल ले महाराज?

हे नाथ! जो कुछ भी हमें मिलता है, आपकी कृपा से ही मिलता है। परन्तु उसको हम अपना मान लेते हैं कि यह तो हमारा ही है। यह आपकी खास उदारता और हमारी खास भूल है। महाराज! आपकी देने की रीति बड़ी विलक्षण है! सब कुछ देकर भी आपको याद नहीं रहता कि मैंने कितना दिया है? आपके अन्तःकरणमें हमारे अवगुणों की छाप ही नहीं पड़ती। आपका अन्तःकरणरूपी कैमरा कैसा है, इसको आप ही जानते हो! उसमें अवगुण तो छपते ही नहीं, गुण-ही-गुण छपते हैं। ऐसा आपका स्वभाव है! सिवाय आपमें अपनेपनके और हमारे पास क्या है महाराज! आप हमें अपना जानते हैं, मानते हैं, स्वीकार करते हैं, तभी काम चलता है नाथ! नहीं तो बड़ी मुश्किल हो जाती! हम जी भी नहीं सकते थे! केवल आपकी कृपाका ही आसरा है, तभी जीते हैं–

आप कृपा को आसरो, आप कृपा को जोर।
आप बिना दीखे नहीं, तीन लोक में और।।

कृपा करके भी आपकी कृपा कभी तृप्त नहीं होती– *'जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती'* (मानस बाल० २८।२)। ऐसी कृपाके कारण ही आप कृपा कर रहे हो! आप हमारे भीतरकी सब बातें पूर्णतया जानते हो, पर जानते हुए भी उधर दृष्टि नहीं डालते और ऐसा बर्ताव करते हो कि मानो आपको पता ही नहीं, आप जानते ही नहीं! आपकी कृपा ही आपको मोहित कर देती है। आप अपने ही गुणोंसे मोहित हो जाते हो। आप अपना किया हुआ उपकार ही भूल जाते हो। अपनी दी हुई वस्तुको भी भूल जाते हो। देते तो आप हो, पर हम मान लेते हैं कि यह तो हमारी ही है! ऐसे कृतघ्न, गुणचोर हैं हम तो महाराज!

पूत कपूत हो चाहे सपूत हो, पूत तो है ही। पूत कभी अपूत नहीं हो सकता। आपने गीतामें कहा है कि जीव सदासे मेरा ही अंश है– 'ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।' अतः अपना पूत जानकर कृपा करो।

हे प्रभो ! हम आपके क्या काम आ सकते हैं? क्या आपका कोई काम अड़ा हुआ है, जो हमारेसे निकलता हो? क्या हमारी योग्यता आपके कोई काम आ सकती है? यह तो केवल हमारा अभिमान बढ़ानेमें काम आती है। आपकी दी हुई चीजको हम अपनी मान लेते हैं और अपनी मान करके अभिमान कर लेते हैं- ऐसे कृतघ्न हैं हम! फिर भी आप आँखें मीच लेते हो। आप उधर खयाल ही नहीं करते। आपके ऐसे स्वभावसे ही तो हम जी रहे हैं।

हे नाथ! हम आपसे क्या कहें? हमारे पास

कहनेलायक कोई शब्द नहीं है, कोई योग्यता नहीं है। आप जंगल में रहनेवाले किरातोंके वचन भी ऐसे सुनते हो, जैसे पिता अपने बालककी तोतली वाणी सुनता है–

बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन॥

(मानस, अयोध्या० १३६)

इसी तरह हे नाथ! हमें कुछ कहना आता नहीं। हम तो बस, इतना ही जानते हैं कि जिसका कोई नहीं होता, उसके आप होते हो–

बोल न जाणूं कोय अल्प बुद्धि मन वेग तें।
नहिं जाके हरि होय या तो मैं जाणूं सदा॥

(करुणासागर ७४)

❋ ❋ ❋

(२)

हे नाथ! हमें आपके चरित्र अच्छे लगें, आपकी लीला अच्छी लगे, आपका रूप अच्छा लगे, आपका धाम अच्छा लगे, आपके गुण अच्छे लगें, आपकी महिमा अच्छी लगे, तो यह आपकी कृपा ही है, हमारा कोई बल नहीं है। आज जो हम आपका नाम ले रहे हैं, आपकी चर्चा सुन रहे हैं, आपमें लगे हुए हैं, यह केवल आपकी ही कृपा है। यह न तो हमारा उद्योग है और न हमारे कर्मोंका फल ही है। किसीकी ऐसी योग्यता, सामर्थ्य नहीं है कि आपकी तरफ आ सके। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर–जैसे कितने-कितने अवगुण भरे हुए हैं और कैसा वायुमण्डल है! कैसा कलियुगका समय है! ऐसे समयमें आपकी तरफ वृत्ति होती है तो यह केवल आपकी कृपा है। आपकी कृपाके बिना

जीव अपने बलसे आप की तरफ आ सकता ही नहीं! सन्तों का संग भी आप ही देते हो। प्रेरणा भी आपकी होती है। आप ही ऐसा वायुमण्डल बना देते हो, जिससे आपकी तरफ आने के लिये हम बाध्य, विवश हो जाते हैं! मानमें, बड़ाईमें, आदरमें, प्रशंसामें, रुपयोंमें, भोगोंमें, संग्रहमें, सुखमें, आराममें हमारा मन स्वतः जाता है– यह तो है हमारी दशा! और इसपर भी जो सत्संग मिलता है, आपकी चर्चा मिलती है, आपकी कथा मिलती है तो यह आपकी ही कृपा है महाराज! संसार का चिन्तन तो अपने आप होता है; क्योंकि ऐसा स्वभाव पड़ा हुआ है, पर आपकी चर्चा, आपका चिन्तन आपकी कृपासे ही होता है। आपने ही सद्बुद्धि दी है। हमारी दशा तो बेदशा है, पर आप हमारी दशाकी तरफ देखते ही नहीं हो, हमारे अवगुणोंकी तरफ देखते ही नहीं हो।

आपका ऐसा स्वभाव ही है*। आपकी अपनी कृपासे ही आप मोहित हो जाते हो! अपनी ही कृपाके वशीभूत होकर आप हम-जैसों को भी अपनी तरफ खींचते हो! उस कृपा से ही हम आपकी ओर आते हैं, अपनी शक्ति से, भक्ति से नहीं!

हे नाथ! भक्ति भी आप देते हो, तब होती है अपनी जबर्दस्तीसे भक्ति लेनेकी ताकत किसीमें नहीं है। इतना ही नहीं, संसार के पदार्थ लेनेकी और भोगनेकी इच्छा होनेपर भी हम ले नहीं सकते, भोग नहीं सकते। जब नाशवान् संसारमें भी हमारा वश नहीं चलता, तो फिर आप की अविनाशी भक्ति, अविनाशी गुण हमारे बलसे कैसे मिल सकते हैं? हम जिस धन, मान,

*उमा राम सुभाउ जेहिं जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना।।
(मानस, सुन्दर० ३४/२)

बड़ाई, आराम आदि के लिये उद्योग करते हैं और झूठ, कपट, बेईमानी आदिको दोष जानते हुए भी स्वीकार करते हैं, उस धन आदिको भी प्राप्त नहीं कर सकते! फिर हम आपकी तरफ चलें–यह क्या हमारी शक्ति है? हम विनाशीको भी नहीं पकड़ सकते, फिर अविनाशीको कैसे पकड़ सकते हैं? उसको पकड़ सकते ही नहीं। हमारी क्या ताकत है प्रभो! यह तो आपने ही कृपा की है, जिससे हम आपकी चर्चा सुनते हैं, आपके चरित्र सुनते हैं, आपके गुणों का वर्णन सुनते हैं, आपका नाम सुनते हैं, आपके विग्रह का दर्शन करते हैं। आप ही कृपा करके ऐसा संयोग बैठाते हो। आप ही ऐसी परिस्थिति पैदा कर देते हो, जिससे हम और कहीं जा नहीं सकते! यह सब आप ही करते हो और आपको करना ही पड़ेगा; क्योंकि हम आपके हैं। अच्छे

हैं तो आपके हैं, बुरे हैं तो आपके हैं- *'जो हम भले बुरे तौ तेरे'* हम आपके पाले पड़ गये! आप भी क्या कर सकते हो? आपमें खींचनेकी ताकत तो है, पर दूर करनेकी ताकत है ही नहीं! आपका स्वभाव ही ऐसा है!

हे नाथ! आप कितनी-कितनी विलक्षण कृपा करते हो कि हम पहचान ही नहीं सकते। आपका दिया हुआ ही आपको मोहित कर रहा है! आपके दिये हुए गुणोंसे ही आप मोहित हो जाते हो ! हमारे अवगुणों की तरफ, हमारी स्थिति की तरफ, हमारे विकारोंकी तरफ, हमारे विचारोंकी तरफ आपकी दृष्टि जाती ही नहीं। यह आपका स्वभाव है, हमारा गुण नहीं, इस स्वभावके परवश होकर ही आप हमारे को अपनी तरफ खींचते हो। हम आपकी इस कृपाको किंचित् भी कह नहीं सकते, जान नहीं सकते, पहचान नहीं

सकते! हमारी क्या ताकत है? हमारा तो कहना ही क्या है, जो मुक्त हो गये हैं, उन तत्त्वज्ञ महापुरुषोंको भी आप अपनी तरफ खींचते रहते हो*, उनको भी निजानन्दमें टिकने नहीं देते हो! उनको अपना परमप्रेम प्रदान करनेके लिये आप लालायित हो जाते हो और इसके लिये उनके जीवन्मुक्तिके आनन्दको भी फीका, किरकिरा कर देते हो। जब जीवन्मुक्त महापुरुषोंकी भी ऐसी बात है, फिर हम अपनी कहाँतक कहें? हमारी बुद्धि, विचारशक्ति वहाँ तक पहुँचती ही

*आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूतगुणो हरिः।।
'ज्ञानके द्वारा जिनकी चिज्जडग्रन्थि कट गयी है, ऐसे आत्माराम' मुनिगण भी भगवान् की निष्काम भक्ति किया करते हैं; क्योंकि भगवान्के गुण ही ऐसे हैं कि वे जीवों को अपनी तरफ खींच लेते हैं'
(श्रीमद्भा० १।७।१०)

नहीं!

हे प्रभो! हम सांसारिक मायामोह में फँसे हुए हैं। उसमें ही बने रहना चाहते हैं। उसमें ही सुख मानते हैं, आराम मानते हैं। हम उसमें ही अपना हित मानते हैं, जो कि हमारे अहितका खास कारण है। बुराईको हम भलाईसे भी विशेष आदर देते हैं। हम जानकर उद्योगपूर्वक छिप-छिपकर पाप करते हैं। पाप, अन्यायजनित सुख मिलनेमें अपना सौभाग्य, लाभ, बुद्धिमत्ता, चतुराई मानते हैं। पापजन्य रुपये-पैसे, सुख आराम मिलनेपर खुशी मनाते हैं कि हम निहाल हो गये! मौज हो गयी! इनके दोषोंकी तरफ हमारी दोषदृष्टि जाती ही नहीं, जिससे हम फँस जाते हैं, चौरासी लाख योनियोंमें जाते हैं, नरकोंमें जाते हैं, दुःख भोगते हैं, कराहते हैं, चिल्लाते हैं, पुकारते हैं। फिर भी उधर ही जानेका मन

करता है! क्या करें नाथ! आप ही हमें अपनी तरफ खींच लें।

हे नाथ! आपकी कृपाकी तरफ हमारी दृष्टि जाती है तो वह भी आपकी कृपासे ही जाती है। पर हम इसको भी नहीं पहचानते! आसक्ति, कामना, मोह, मूढता, घमण्ड, ईर्ष्या आदि बड़े-बड़े दोषोंके जालमें हम फँसे हुए हैं, जो कि पतन करनेवाली, दुःख देनेवाली आसुरी-सम्पत्ति है। हमारी तो यह दशा है! परन्तु आप हमारे स्वभाव, कृति आदिको न देखकर हमें अपनी तरफ खींचते हो, यह आपकी कृपा है, आपका स्वभाव है। हम तो इसको भी नहीं पहचानते। हाँ, कभी-कभी मन में लहर आ जाती है। आपकी कृपा की तरफ हमारी दृष्टि चली जाती है तो यह भी आपकी कृपासे होता है। आप कृपादृष्टिसे थोड़ा-सा देखते हो, उसीसे यह बात पैदा होती है। नहीं

तो हमारे में वैसी कोई योग्यता नहीं, कोई सामर्थ्य नहीं, इस तरफ हमारी कोई रुचि नहीं। हमारी रुचि तो संसारके भोगोंकी है। शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि—सब प्रकृतिके हैं, पर इनके वशमें होकर हम विषयोंका सेवन करते हैं, इनकी हाँ-में-हाँ मिलाते हैं। हमारी दशा तो यह है! आप ही कृपा करते हो तो हमारी दृष्टि आपकी कृपा की तरफ जाती है। ऐसे युगमें ऐसे वायुमण्डलमें, ऐसे समुदायमें, ऐसी प्रवृत्तिमें हम रहते हैं, फिर भी आपकी तरफ खिंचाव होता है तो यह केवल आपकी कृपासे ही होता है। आपकी तरफ हमारी जो रुचि होती है, वह भी आपकी दी हुई है प्रभो! हमारे पास क्या है? केवल आपकी कृपा है। उस कृपाके ही भरोसे हम आपकी तरफ चलते हैं। हमारेमें कोई योग्यता नहीं, कोई सामर्थ्य नहीं, कोई विवेक-विचार नहीं! आपके ही दिये हुए

विवेकको हम अपना मान लेते हैं और अभिमान कर लेते हैं कि हम ऐसे समझदार हैं! हमारी बेसमझीकी, मूर्खताकी हद हो गयी महाराज! परन्तु आपका इस तरफ खयाल ही नहीं है-
'जन अवगुन प्रभु मान न काऊ!'

दूसरे आदमी तो बेचारे भ्रम में रह जायँ; क्योंकि वे हमारे को जानते नहीं हैं। परन्तु आप तो हमारे रग-रग की बात जानते हो। आप हमारे मनकी स्फुरणाको भी जानते हो, पहले किये हुए हमारे कर्मोंको भी जानते हो, हमारी वर्तमान-दशा को भी जानते हो, हमारे बुरे स्वभावको, पुरानी आदतको भी जानते हो; परन्तु आप उस तरफ देखते ही नहीं! उलटे आप हमें अपनी तरफ खींचते हो; क्योंकि यह आपका स्वभाव है। इस स्वभावसे ही आप जीवको अपनी विशेष कृपासे चौरासी लाख योनियाँ, नरक, दुःख, हानि, रोग,

शोक, भय, उद्वेग, सन्ताप आदि देते हो, जिससे इसको चेत हो जाय। जैसे सोते हुए आदमीको उठाना हो तो सुई चुभानेसे उसको चेत हो जाता है, ऐसे ही हमें चेतानेके लिये, अपनी ओर खींचनेके लिये आप प्रतिकूल परिस्थिति भेजते हो। आप किसी भी अवस्था, परिस्थितिमें हमें टिकने नहीं देते– यह आपका निरन्तर आह्वान है, अपनी तरफ बुलाना है। आपने अपनी कृपासे संसार की रचना ही ऐसी की है कि कोई भी अवस्था, परिस्थिति आदि निरन्तर हमारे साथ नहीं रहती। संसार का निरन्तर हमारे से वियोग होता रहता है।

हे प्रभो! आप हमें चेत करानेमें कमी नहीं करते, हमें बार-बार चेताते हो, फिर भी हम चेत नहीं करते, उलटे अपने बल और बुद्धिमानीसे पुनः उन्हीं दोषोंकी तरफ जाते हैं! उन दोषोंके फलस्वरूप मिली प्रतिकूल परिस्थिति से बचनेके

लिये हम पुनः वही दोष करते हैं– यह तो हमारी दशा है! फिर भी हमें चेत कराने में आप उकताते नहीं–यह आपकी कृपा है! हमारी तो कभी कोई इच्छा हो जाती है,कभी कोई चाहना हो जाती है, कभी कोई मार्ग पकड़ लेते हैं, कभी किसीका संग कर लेते हैं, कभी किसीकी बात ठीक मान लेते हैं– ऐसे हम भ्रममें पड़ जाते हैं, फिर भी आप हमें निकाल लेते हो। आपकी कृपा बड़ी विलक्षण है!

हे नाथ! आपके भीतर जीवोंका कल्याण करनेकी जो चाह है, उसको हम समझ ही नहीं पाते। माँकी कृपाको बालक क्या समझे? बालक तो बेसमझ होता है। माँ तो उसको नहलाकर साफ करती है, पर वह रोता है। यही दशा हमारी है महाराज! इसलिये हे नाथ! कृपा करो। कृपा कर ही रहे हो। क्या हमारे कहनेसे कृपा करोगे? आपका तो स्वभाव ही कृपा करनेका है।

फिर भी हम आपसे बार-बार कहते हैं कि कृपा करो, तो इस बातको भी आप सह लेते हो! यह आपकी कितनी सहिष्णुता हैं, धैर्य है! आप अपनी तरफसे स्वतः–स्वाभाविक कृपा करते हो और उसीसे जीवोंका उद्धार होता है। जीवोंको कुछ चेत होता है, होश आता है तो आपकी कृपासे ही आता है। वे निषिद्ध आचरण करते हैं तो आप ही उनको नरकोंमें भेजकर शुद्ध करते हो। आपने गीता में कहा है।

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्।।
(१६।२०)

'हे कुन्तीनन्दन! वे मूढ़ मनुष्य मेरेको प्राप्त न करके ही जन्म-जन्मान्तरमें आसुरी योनिको प्राप्त होते हैं, फिर उससे भी अधिक अधम गतिमें अर्थात् भयंकर नरकोंमें चले जाते हैं।'

आपने कितनी विलक्षण बात कही है कि मूढ़ मनुष्य मेरे को प्राप्त न करके आसुरी योनियोंमें चले जाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि आप सब मनुष्योंको अपनी प्राप्ति कराना चाहते हो! इसीलिये आप उनको ऐसा विवेक, अवसर, संग देते हो, जिससे वे आपकी प्राप्ति कर सकें। परन्तु हम आपके दिये हुए विवेकका दुरुपयोग करके पतनकी तरफ जा रहे हैं और उसमें अपनी बुद्धिमानी मान रहे हैं! हे नाथ! पतितोंका उद्धार करना आपका सहज स्वभाव है। आपके इस स्वभावको देखकर हमारे मनमें विशेष उत्साह होता है कि हम पतित हैं और आप पतितपावन हैं, फिर हमारा उद्धार होनेमें क्या सन्देह है?

मैं हरि पतित-पावन सुने
मैं पतित तुम पतित-पावन दोउ बानक बने।।

(विनयपत्रिका १६०)

* * *

।। श्रीहरिः ।।

नित्य पठनीय श्रीमद्भगवद्गीता के पाँच श्लोक

वसुदेवसुतं देवं कंस चाणूरमर्दनम्।
देवकी परमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरूम्।।

गीता अध्याय ४, संख्या ६ से १० तक

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

जन्म कर्म च मे दिव्य मेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञान तपसा पूता मद्भावमागताः।।

गीता सार

(अध्याय संख्या १ से १८)

(गीता मर्मज्ञ परम श्रद्धेय स्वामीजी श्री रामसुखदासजी महाराज)

१. सांसारिक मोह के कारण ही मनुष्य 'मैं क्या करूँ और क्या नही करूँ'-इस दुविधा में फँसकर कर्तव्यच्युत हो जाता है। अतः मोह या सुखासक्ति के वशीभूत नहीं होना चाहिये।

२. शरीर नाशवान् है और उसे जानने वाला शरीरी अविनाशी है-इस विवेक को महत्त्व देना और अपने कर्तव्य का पालन करना-इन दोनों में से किसी भी एक उपाय को काम में लाने से चिन्ता शोक मिट जाते हैं।

३. निष्कामभाव-पूर्वक केवल दूसरों के हित के लिये अपने कर्तव्य का तत्परता से पालन करने-मात्र से कल्याण हो जाता है।

४. कर्मबन्धन से छूटने के दो उपाय हैं-कर्मों के तत्त्व को जानकर निःस्वार्थ भाव से कर्म करना और तत्त्वज्ञान का अनुभव करना।

५. मनुष्य को अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थियों के आने पर सुखी-दुःखी नहीं होना चाहिये, क्योंकि इनसे सुखी-दुःखी होने वाला मनुष्य संसार से ऊँचा उठकर परम आनन्द

का अनुभव नहीं कर सकता।

६. किसी भी साधन से अन्तःकरण में समता आनी चाहिये। समता आये बिना मनुष्य सर्वथा निर्विकार नहीं हो सकता।

७. सब कुछ भगवान् ही है-ऐसा स्वीकार कर लेना सर्वश्रेष्ठ साधन है।

८. अन्तकालीन चिन्तन के अनुसार ही जीव की गति होती है। अतः मनुष्य को हरदम भगवान् का स्मरण करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिये, जिससे अन्त काल में भगवान की स्मृति बनी रहे।

९. सभी मनुष्य भगवत्प्राप्ति के अधिकारी हैं, चाहे वे किसी भी वर्ण, आश्रम, सम्प्रदाय, देश, वेश आदि के क्यों न हो।

१०. संसार में जहाँ भी विलक्षणता, विशेषता, सुन्दरता, महत्ता, विद्वत्ता, बलवत्ता आदि दिखे उसको भगवान् का ही मान कर भगवान् का ही चिन्तन करना चाहिये।

११. इस जगत् को भगवान् का ही स्वरूप मानकर प्रत्येक मनुष्य भगवान् के विराट्‌रूप के दर्शन कर सकता है।

१२. जो भक्त शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि सहित अपने-आपको भगवान के अर्पण कर देता है, वह भगवान् को प्रिय होता है ?

१३. संसार में एक परमात्म तत्त्व ही जानने योग्य है। उसको जानने पर अमरता की प्राप्ति हो जाती है।

१४. संसार-बन्धन से छूटने के लिए सत्त्व, रज् और तम्-इन तीनों गुणों से अतीत होना जरूरी है। अनन्य-भक्ति से मनुष्य इन तीनों गुणों से अतीत हो जाता है।

१५. इस संसार का मूल आधार और अत्यन्त श्रेष्ठ परम पुरुष एक परमात्मा ही है-ऐसा मानकर अनन्य भाव से उनका भजन करना चाहिये।'

१६. दुर्गुण-दुराचारों से ही मनुष्य चौरासी लाख योनियों एवं नरकों में जाता है और दुःख पाता है। अतः जन्म मरण के चक्कर से छूटने के लिए दुर्गण दुराचारों का त्याग करना आवश्यक है।

१७. मनुष्य श्रद्धापूर्वक जो भी शुभ कार्य करे उसको भगवान् का स्मरण करके, उनके नाम का उच्चारण करके ही आरम्भ करना चाहिये।

१८. सब ग्रन्थों का सार वेद है वेदों का सार उपनिषद् है, उपनिषदों का सार गीता है और गीता का सार भगवान् की शरणागति है। जो अनन्य भाव से भगवान् के शरण हो जाता है उसे भगवान् सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर देते हैं।

***

।। श्रीहरिः ।।

गीताप्रेस से प्रकाशित

श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज की कल्याणकारी पुस्तकें

१. गीता-साधक-संजीवनी
२. साधन-सुधा-सिन्धु
३. गीता-दर्पण
४. गीता-माधुर्य
५. गीता-ज्ञान-प्रवेशिका
६. भगवत्तत्त्व
७. जीवन का कर्तव्य
८. एकै साधै सब सधै
९. जीवनोपयोगी कल्याण-मार्ग
१०. सर्वोच्च पद की प्राप्ति का साधन
११. जीवनका सत्य
१२. कल्याणकारी प्रवचन
१३. तात्त्विक प्रवचन
१४. भगवान् से अपनापन
१५. कल्याणकारी प्रवचन (भाग-२)
१६. शरणागति
१७. भगवन्नाम
१८. जीवनोपयोगी प्रवचन
१९. सुन्दर समाज का निर्माण
२०. मानस में नाम-वन्दना
२१. सत्संग की विलक्षणता
२२. साधकों के प्रति
२३. भगवत्प्राप्ति सहज है
२४. अच्छे बनो
२५. भगवत्प्राप्तिकी सुगमता
२६. वास्तविक सुख
२७. स्वाधीन कैसे बनें ?
२८. कर्म-रहस्य
२९. गृहस्थ में कैसे रहें ?
३०. सत्संग का प्रसाद
३१. महापाप से बचो
३२. सच्चा गुरु कौन ?
३३. आवश्यक शिक्षा
३४. नाम-जप की महिमा
३५. मूर्ति पूजा

३६. दुर्गतिसे बचो
३७. संतान का कर्तव्य
३८. आहार-शुद्धि
३९. सच्चा आश्रय
४०. सहज साधना
४१. नित्ययोगकी प्राप्ति
४२. हम ईश्वरको क्यों मानें ?
४३. नित्य-स्तुति
४४. वासुदेवःसर्वम्
४५. साधन और साध्य
४६. कल्याण-पथ
४७. मातृशक्तिका घोर अपमान
४८. जिन खोजा तिन पाइया
४९. किसानों के लिए शिक्षा
५०. तत्त्वज्ञान कैसे हो ?
५१. भगवान् और उनकी भक्ति
५२. जित देखूँ तित तू
५३. देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम
५४. गृहस्थों के लिए
५५. सब जग ईश्वर रूप है
५६. यह विकास है या विनाश ? जरा सोचिए
५७. हम कहाँ जा रहे हैं ?
५८. सार-संग्रह
५९. संकल्प पत्र
६०. अमरता की ओर
६१. अलौकिक प्रेम
६२. सत्संगके अमृत-कण
६३. भक्तके उद्‌गार
६४. गायकी महत्ता और आवश्यकता
६५. अमृत-बिन्दु
६६. सत्संग-मुक्ताहार
६७. मुक्तिमें सबका अधिकार
६८. सत्यकी खोज
६९. सत्यकी स्वीकृति से कल्याण
७०. क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं ?
७१. आदर्श कहानियाँ
७२. प्रश्नोत्तर मणिमाला
७३. शिखा(चोटी) धारण की आवश्यकता
७४. परमविश्राम की प्राप्ति
७५. मेरे तो गिरधर गोपाल
७६. कल्याणके तीन सुगम मार्ग
७७. प्रेरक कहानियाँ

हमारी पूरी कोशिश है कि आपको हिंदी की अधिकतम पुस्तकें मुफ्त उपलब्ध करायी जायें और इन्टरनेट पर हिंदी की उपस्थिति को अधिक से अधिक बढ़ाया जाए | इसी क्रम में मैं आपके सामने एक से एक अधिक पुस्तकें प्रस्तुत कर रहा हूँ |

परन्तु जैसा कि आप जानते हैं इंटरनेट पर किताबें अपलोड करने , उन्हें हमेशा उपलब्ध रखने , तथा साईट अच्छी तरह और सरल रूप से काम करे इसके लिए अत्यंत मेहनत के साथ साथ संसाधनों की भी आवश्यकता होती है , और यही वह कारण है जिसकी वजह से अभी तक हिंदी भाषा की कोई भी वेबसाइट एक दो साल से ज्यादा नहीं चली है और बहुत ही अल्प समय में एक से एक अच्छी वेबसाइट बंद हो चुकी हैं |

यह चुनौती हमारे सामने भी है , लेकिन एक विश्वास भी कि हिंदी के जागरूक हो रहे पाठकों को इस समस्या के बारे में अंदाज़ा है और वे इस बारे में केवल मूकदर्शक नहीं है | हम आपको हिंदी की पुस्तकें देंगे , हिंदी में जानकारी देंगे और बहुत कुछ देंगे और हमें आशा है कि आप भी हमे बदले में अपना प्यार देंगे और हमारी मदद करेंगे हिन्दी को सम्म्रद्ध बनाने में |

अपना हाथ बढाइये और हमारी मदद कीजिये | मदद करने के लिए जरूरी नहीं है कि आप पैसे या आर्थिक मदद ही करें , आप जिस तरह चाहें उस तरह हमारी मदद कर सकते हैं | हमारी मदद करने के तरीकों को आप यहाँ देख सकते हैं |

आशा है आप हमारी सहायता करेंगे |

अगर आपको हमारा प्रयत्न पसंद आया हो तो सिर्फ 500 रू. का सहयोग करे| आपका सहयोग हिंदी साहित्य को अधिक से अधिक विस्तृत रूप देने में उपयोगी होगा | आप Paypal अथवा बैंक ट्रान्सफर से सहयोग कर सकते हैं | अधिक जानकारी के लिए मेल करें preetam960@gmail.com अथवा यहाँ देखें

धन्यवाद